क्या अतीत में हम नरभक्षी थे?

डी. बालसुब्रमण्यन

क्या कभी ऐसा वक्त था जब इंसान इंसान का भक्षण करता था? यह तो सर्वज्ञात है कि इंसान जीव के लगभग हर रूप को हज़म कर जाता है; चाहे वह फफूंद हो, बैक्टीरिया, पौधे, कीट हों या जल, थल या नभ में रहने वाले जीव। फिर नरभक्षण में क्या कोई जैविक समस्या है या फिर कोई सांस्कृतिक अड़चन है? कई जानवर स्वजाति भक्षण करते हैं। कुछ अपने ही बच्चों को खा जाते हैं। 'पीपुल फॉर द इथिकल ट्रीटमेंट ऑफ एनिमल्स' के अध्यक्ष एलेक्स पेचेको लिखते हैं कि उन्होंने भूखे कुत्तों को अपने ही पिल्लों को खाते देखा है। फ्रांस डी वॉल और डेसमंड मॉरिस ने अपनी पुस्तक 'चिम्पैंजी पॉलिटिक्स-पॉवर एण्ड सेक्स अमंग एप्स' में दावा किया है कि बड़े वानर भी स्वजाति भक्षी हैं लेकिन ऐसा कम ही होता है। क्या विकास ने हमें एक-दूसरे के भक्षण हेतु लैस किया है और हमारी संस्कृति इसे रोकती है?

स्वजाति भक्षण के ऐतिहासिक विवरण बहुत स्पष्ट व विश्वसनीय नहीं हैं। ऐसा इसलिए कि वे पूर्वाग्रहों से ग्रस्त होते हैं। इसके अलावा उनमें अपने पंथ/सम्प्रदाय या देश की शेखी बघारने की भरपूर कोशिश होती है।

मसलन, कोलम्बस ने कैरेबिया में एक नरभक्षी जनजाति कैनिबा से सम्पर्क होने की बात कही है। नरभक्षी के लिए कैनिबल शब्द कैनिबा से ही बना है। यह स्पष्ट नहीं है कि कैनिबा सचमुच में अपने साथी इंसानों को खा लेते थे या यह मात्र पड़ोसी जनजाति द्वारा फैलाया गया दुष्प्रचार था। सच्चाई जो भी हो मगर पोप इनोसेंट-4 ने इसे एक पाप घोषित किया था। पोप के इस फतवे के परिणामस्वरूप रानी इसाबेला ने स्पेन के औपनिवेशकों को आदेश दिया कि वे नरभक्षी माने गए लोगों को कानूनन गुलाम बना लें। इससे एक तो उन्हें गुलाम बनाने का लाइसेंस मिल गया, दूसरे यह उनके आर्थिक हित में भी था। वे इस आशय के आरोप लगाते और फिर उस इलाके पर कब्ज़ा कर लेते।

स्वजाति भक्षण का निष्पक्ष और पूर्वाग्रह रहित इतिहास मिल पाना खासा मुश्किल मसला है। इतिहास में जब भी ऐसे कथन मिलते हैं कि इंसान को इंसानी मांस खाते देखा गया है तो साथ में यह स्पष्ट नहीं किया जाता है कि ऐसा भोजन के अभाव में हुआ था या फिर किसी सांस्कृतिक, धार्मिक, चिकित्सकीय रिवाज़ या प्रतीक के बतौर हुआ। लगता है कि उग्र तांत्रिक लोग ऐसे क्रियाकलाप करते हैं। वे धार्मिक अनुष्ठानों में खून और शरीर के दूसरे हिस्से काम में लेते हैं।

मध्य युरोप के चिकित्सा से जुड़े लोग मिरगी, पोरफाइरिया और गठिया में खून और इंसान के अंगों के उपयोग की अनुशंसा करते थे। पापुआ न्यू गिनी की नरभक्षी मानी जाने वाली जनजाति फोर शायद धार्मिक रिवाज़ के तहत ऐसा करती थी। नोबल पुरस्कार प्राप्त डॉ. कार्लिटोन गजडुसेक ने फोर जनजाति में मस्तिष्क के एक घातक रोग का अध्ययन किया था। उन्होंने वहां के अपने अनुभवों का विस्तार में वर्णन किया है। उन्होंने देखा कि मृत फोर व्यक्ति के परिवार के लोग और पड़ोसी धार्मिक रिवाज़ के तहत मृत व्यक्ति के मस्तिष्क को चबाते थे। उनका मानना था कि इससे मृत्यु के बाद का मृतक का जीवन सुरक्षित होगा। होता यह है कि किसी व्यवहार का एक संदर्भ में और विस्तार में अध्ययन न करने से हम किन्हीं ऐसे निष्कर्षों पर पहुंच जाते हैं जो हमारी बनी-बनाई धारणाओं की ही पुष्टि करते हैं। इससे हमें पता चलता है कि यह स्पष्ट नहीं है कि स्वजाति भक्षण का उक्त व्यवहार भूख से जन्मा था या इसके पीछे कोई धार्मिक कारण था। खैर, मैं तो धार्मिक कारणों को ही मानना चाहूंगा, चाहे इसके लिए मुझे अड़ियल ही क्यों न

समझा जाए।

अब पता चला है कि ऐसी कुछ प्रथाओं के जैविक नुकसान भी हो सकते हैं। यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन के डॉ. जॉन कॉलिज, पश्चिम ऑस्ट्रेलिया के उनके सहयोगियों और पापुआ न्यू गिनी के गोरोका ने मिलकर एक अध्ययन किया है। इसमें फोर जनजाति के इस नरभक्षीय व्यवहार के जिनेटिक पहलुओं का अध्ययन किया गया है।

कुरु एक दिमागी रोग है - एक तंत्रिकाक्षय रोग जो प्रभावित व्यक्ति को पूरी तरह से बर्बाद कर देता है। यह वैसा ही है जैसे भेड़ों में स्क्रेपी और गायों में मैड काउ डिसीज़। डॉ. गजडुसेक ने दर्शाया था कि इसका (कुरु का) कारण एक धीमा असर करने वाला वायरस है जो मृत व्यक्ति के मांस में पाया जाता है। अब यह साफ हो गया है कि दरअसल यह विषाणु न तो डी.एन.ए. वायरस है और न ही आर.एन.ए. वायरस। वास्तव में यह एक छोटे से प्रोटीन का बिगड़ा रूप है जिसे हम प्रिऑन कहते हैं। गलत ढंग से तह किए प्रिऑन एक बीज या केन्द्रक की तरह काम करते हैं। ये दूसरे प्रिऑन को भी गलत ढंग से तह होने को प्रेरित करते हैं। ये तमाम प्रिऑन एक तंतुमय लोथ बना लेते हैं जो मस्तिष्क कोशिकाओं को मार डालते हैं। माना जाता है कि सी.जे.डी. और स्क्रैपी व मैड काउ रोग इसी तरह से फैलते हैं। रोग होने पर तंत्रिका तंत्र में सामान्यतः पाया जाने वाला एक प्रोटीन पीआरपी-सी अपना सामान्य आकार खो बैठता है और गलत ढंग से लिपटा, गलत आकार वाला प्रोटीन पीआरपी-एससी बन जाता है। इससे एक श्रृंखला शुरू हो जाती है और ज़्यादा से ज़्यादा सामान्य पीआरपी-सी गलत ढंग से मुड़ते जाते हैं और इकट्ठे होकर अघुलनशील पीआरपी-एससी में मिलते जाते हैं। इसे एमिलॉएड प्लाक कहते हैं। इससे मस्तिष्क कोशिकाएं गलत तरह से सक्रिय हो जाती हैं और मर जाती हैं।

कोलम्बस ने कैरेबिया में एक नरभक्षी जनजाति कैनिबा से सम्पर्क होने की बात कही है। यह स्पष्ट नहीं है कि कैनिबा सचमुच में अपने साथी इंसानों को खा लेते थे या यह मात्र पड़ोसी जनजाति द्वारा फैलाया गया दुष्प्रचार था। सच्चाई जो भी हो मगर पोप इनोसेंट-4 ने इसे एक पाप घोषित किया था। पोप के इस फतवे के परिणामस्वरूप रानी इसाबेला ने स्पेन के औपनिवेशकों को आदेश दिया कि वे नरभक्षी माने गए लोगों को कानूनन गुलाम बना लें।

कॉलिज और उनके समूह ने उस जीन पर ध्यान केंद्रित किया जिसमें इंसानों के प्रिऑन प्रोटीन का कोड होता है। इसका नाम पीआरएनपी है। फिर उन्होंने पापुआ न्यू गिनी जाकर फोर जनजाति के पीआरएनपी प्रोफाइल का अध्ययन किया। अब वह जनजाति कुरु रोग से प्रभावित नहीं है क्योंकि ऑस्ट्रेलिया सरकार ने 1950 के दशक में नरभक्षण की प्रथा पर रोक लगा दी थी। कॉलिज ने उन बुजुर्ग फोर लोगों के पीआरएनपी जीन का अध्ययन करने का निर्णय लिया जो प्रतिबंध लगने से पहले नरभक्षण की प्रथा अपनाते थे। साथ ही उन युवा फोर लोगों को भी देखा जिन्होंने ऐसा कभी नहीं किया था। तुलना के लिए जापान, भारत, श्रीलंका, अफ्रीका, यूरोप और कोलम्बिया के लोगों के पीआरएनपी जीन प्रोफाइल का भी अध्ययन किया गया। इसके पीछे विचार कुरु रोग के जिनेटिक पहलू को समझने का था। यही तरीका पहले सी.जे.डी. रोगियों के विश्लेषण के मामले में भी अपनाया गया था। उस मामले में पाया गया था कि प्रिऑन प्रोटीन के जीन की दो एक-समान प्रतियों वाले लोगों को सी.जे.डी. होने की सम्भावना उन लोगों की बनिस्बत ज़्यादा रहती है जिनमें इनकी दो असमान प्रतियां होती हैं। शायद इसी बेमेलपन के चलते अधिकांश लोग इस रोग से बचे रहते हैं।

अब जब कुरु के लिए जीन श्रृंखलाओं की तुलना की गई तो कोलिज ने पाया कि सभी जनजाति समूहों में प्रिऑन जीन के दो असमान रूप हैं। इनका इतना व्यापक फैलाव इशारा करता है कि ये पूरे मानव इतिहास में संरक्षित रहे हैं। इसके बाद चिम्पैंज़ी के डी.एन.ए. से

तुलना करने पर वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि जीन में ये परिवर्तित रूप कोई 5 लाख साल पहले पनपे होंगे; अधिकांश जीन्स के मामले में एक रूप दूसरे से ज़्यादा फायदेमंद होता है। कम फायदेमंद रूप समय के साथ गुम हो जाते हैं।

फोर जनजाति की महिलाओं में किसी भी एक रूप की 2 प्रतियों की बजाए दोनों रूपों की एक-एक प्रति वाली महिलाएं कहीं ज़्यादा संख्या में पाई गईं। यानी दोनों रूपों की एक-एक प्रति होने से फोर जनजाति के कई लोग कुरु से बचे रहे। कोलिज इसे 'संतुलित करने वाला चयन' कहते हैं। इस तरह से प्रकृति में कुछ जीन्स चुने जाते हैं। इसका एक उल्लेखनीय उदाहरण है हिमोग्लोबिन का जीन। प्रत्येक व्यक्ति में ग्लोबिन प्रोटीन के जीन के दो रूप पाए जाते हैं; एक माता से मिलता है और दूसरा पिता से। इस जीन का एक रूप सिकल सेल एनीमिया का कारण बनता है। संतुलित चयन का ही नतीजा है कि यह रूप बचा रहा है क्योंकि दूसरे रूप की मौजूदगी में यह मलेरिया से सुरक्षा प्रदान करता है।

प्रिऑन जीन का दुनिया भर के इंसानों में पाया जाना इस बात की ओर इशारा करता है कि प्रारंभिक मानव इतिहास में भी प्रिऑन जनित रोग काफी व्यापक रूप से फैले थे। समूह का यह भी मत है कि प्राचीन इंसानों में स्वजाति भक्षण के कारण होने वाले प्रिऑन रोग की बारम्बार महामारी आज के इंसान में सुरक्षा-जीन की मौजूदगी की व्याख्या करती है।

प्रिऑन जीन का दुनिया भर के इंसानों में पाया जाना इस बात की ओर इशारा करता है कि प्रारंभिक मानव इतिहास में भी प्रिऑन जनित रोग काफी व्यापक रूप से फैले थे। समूह का यह भी मत है कि प्राचीन इंसानों में स्वजाति भक्षण के कारण होने वाले प्रिऑन रोग की बारम्बार महामारी आज के इंसान में सुरक्षा-जीन की मौजूदगी की व्याख्या करती है। शायद इसीलिए इंग्लैण्ड के 5 करोड़ बाशिंदों में से सिर्फ 134 लोगों को प्रिऑन संदूषित मांस खाने पर मैड काउ रोग हुआ। ऐसा इंग्लैण्ड की चिकित्सा अनुसंधान परिषद की प्रिऑन इकाई के डॉ. सिमॉन मीड का कहना है। मीड ने डॉ. कॉलिज के साथ काम किया था।

तो क्या प्राचीन मानव इतिहास में स्वजाति भक्षण व्याप्त था? कॉलिज तो ऐसा ही सोचते हैं। कैलिफोर्निया बर्कले विश्वविद्यालय के डॉ. रिम व्हाइट कहते हैं कि पुरातात्विक प्रमाण इस विचार के पक्ष में जा सकते हैं। लेकिन मानव विज्ञानी अभी संतुष्ट नहीं हैं। उनकी दलील है कि मानव विज्ञान में इसे पुष्ट करते प्रमाणों का अभाव है। अपनी अतीत की करतूतों का पर्दाफाश होने के लिए, इंतज़ार और अभी।

(स्रोत विशेष फीचर्स)

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

सदस्यता शुल्क कृपया एकलव्य, भोपाल के नाम बने ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से एकलव्य, ई-7/ एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) 462 016 के पते पर भेजें।